संवाद

बलात्कार और क़ानून

सुनीता ठाकुर

समाज में लगातार बढ़ती बलात्कार की घटनाएं आज हम सभी की चिंता का विषय बन चुकी हैं। समाजशास्त्रीय विश्लेषण की नज़र से बलात्कार ताक़तवर द्वारा कमज़ोर पर नियंत्रण का एक तरीका है, जिसके द्वारा नियंत्रण और दमन का पाठ पीड़ित और पराजित जाति समाज का पढ़ाया जाता है। यह पितृसत्तात्मक दमन नीति का एक ऐसा अचूक हथियार है जो महिलाओं को दैहिक शोषण व दमन द्वारा नियंत्रित और दमित करता है।

बलात्कार महिलाओं के ख़िलाफ़ होने वाला एक संगीन अपराध है। यह एक ऐसा अपराध है जो औरत के शरीर ही नहीं बल्कि उसके पूरे वजूद और आत्मविश्वास पर गहरी चोट पहुंचाता है। शर्म, गुस्सा, अपराधबोध और आत्मग्लानि की भावनाएं उसके जीवन की संभावनाओं को नुकसान पहुंचाती हैं। परिवार और समाज का नज़रिया न्याय की संभावनाओं को खत्म करता है। बलात्कार की कोई भौतिक, सांस्कृतिक और आर्थिक सीमा नहीं होती। उसका सीधा संबंध सत्ता से है, चाहे वह परिवार में हो, समुदाय में, धर्म या राज्य में। प्रायः इसके पीछे दंड/अपमान/बदला/सबक सिखाना जैसी भावनाएं काम करती हैं।

एक स्त्री स्वयं में एक स्वतंत्र अस्तित्व न होकर किसी परिवार, कुल, वर्ग, जाति या धर्म राज्य सत्ता की धरोहर और सम्मान का प्रतीक बना दी जाती है। पूरे समाज की इज़्ज़त क्योंकर स्त्री की यौनिक शुचिता में आकर समा जाती है— यह सवाल हमें अपने आप से करना होगा। हमें यह समझने की ज़रूरत है कि बलात्कार में औरत का कोई दोष नहीं होता। यह पुरुषों की सत्ता और अहं का परिणाम होता है। इस अपराध को बढ़ाने में जितना सामाजिक सोच व व्यवस्थाओं का दोष है उतना ही मौजूदा क़ानूनी ढांचों का भी है जो बलात्कार को महज एक शारीरिक अपराध के रूप में देखते हैं। बलात्कार सिद्ध करने की ज़िम्मेदारी औरत पर ही छोड़ देते हैं। पूरी व्यवस्था व समाज औरत को ही दोषी मान लेते हैं।

क़ानून में — विरोध किया गया है या नहीं, सशक्त विरोध है या हल्का फुल्का विरोध, विरोध किए जाने के प्रमाण, योनि में लिंग के हिंसात्मक प्रवेश के प्रमाण, वीर्य का पाया जाना, बहुत सी ऐसी बारीक प्रमाणगत शर्तें हैं जिनके साबित न होने या सबूतों के नष्ट या खराब हो जाने की स्थिति में बलात्कार के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने वाली महिला को न्याय मिलने की संभावनाएं ख़त्म हो जाती हैं। परिवार, समाज और लंबी क़ानूनी प्रक्रियाओं के डर से महिलाएं व परिवार क़ानूनी लड़ाई से अपने कदम पीछे कर लेती हैं। अब अगर इन क़ानूनी संदर्भों को ही देखें तो बहुत से कमज़ोर पक्ष हमारे क़ानून और क़ानून लागू करने वाली एजेंसियों में नज़र आते हैं।

क़ानून लागू करने की महत्वपूर्ण और बुनियादी कड़ी पुलिस तंत्र है। हम सभी जानते हैं कि अधिकार और न्याय की लड़ाई का पहला कदम कितना महंगा साबित होता है। वर्तमान सामाजिक, क़ानूनी स्थितियों से हम सभी परिचित हैं। इन स्थितियों में सुधार लाने के लिए आज हमें अपने भीतर झांककर कुछ गंभीर वैचारिक एवं व्यावहारिक व्यवस्थागत, क़ानूनी बदलाव के निर्णय लेने होंगे।

हमारे क़ानूनी तंत्र में बलात्कार की गंभीरता जितनी कम नज़र आती है सामाजिक संदर्भों में वह उतनी ही जटिल है। वास्तव में देखें तो बलात्कार किसी भी महिला के शरीर और आत्मसम्मान को चोट पहुंचाने की एक हरकत मात्र से ज़्यादा नहीं है। कहीं न कहीं मानें तो यह भी सच है कि महिलाएं जितनी हिंसा अपने शरीर और मन पर अपने ही घरों व परिवारों में हर रोज़ झेलती हैं वह किसी मानसिक और भावनात्मक बलात्कार से कम नहीं है। एक ऐसा भावनात्मक बलात्कार जो अपने

ही सबसे करीबी रिश्तों द्वारा किया जाता है। उस पर भी समाज किसी अन्य द्वारा महिला के किसी शारीरिक अंग को चोट पहुंचाने को इतना गंभीर बना देता है कि वह बलात्कारी के लिए एक सज़ा न होकर महिला के लिए अभिशाप बन जाता है।

यहां मैं बलात्कार की संगीनी को कम करने की कोशिश हरगिज़ नहीं कर रही हूं, बल्कि महिला के साथ होने वाले दोहरे अपमानजनक रवैयों की ओर ध्यान दिलाने की कोशिश करना चाहती हूं जो उसका जीना हराम कर देते हैं और उसे इस घटना को भूलने या उससे बाहर आने नहीं देते। बलात्कार की शिकार महिला के प्रति बेचारगी और तरस खाने जैसे व्यवहार तो बहुत सामने आते हैं मगर दोषी को खोजने और उस महिला को हिम्मत व सम्मान के साथ संघर्ष करने में मदद करने की कोशिशें यदा-कदा ही सामने आती हैं। बलात्कार के बारे में बहुत से मिथक हमारे दिमाग और समाज का हिस्सा आज भी हैं जिन पर विचार करना और सच्चाइयों को समझना बहुत ज़रूरी है।

समाज में स्त्रियों के मुकाबले पुरुष कहीं ज़्यादा यौनिक मुखर व स्वच्छंद होते हैं। स्त्रियों को यौनिक आचरणों और अपनी यौनिकता के प्रति बेपरवाह और ख़ामोश रहना सिखाया जाता है। यही कारण है कि जब भी स्त्रियां ऐसे यौन दुर्व्यवहारों, आक्रमणों, बलात्कार या बलात्कार सम्य स्थितियों का सामना करती हैं तो वे या तो घबरा जाती हैं, या फिर लड़ने से पहले ही हथियार डाल देती हैं। आत्मविश्वास की यह कमी पुरुष बलात्कारियों का काम बहुत आसान कर देती है। हमें यह समझना होगा कि स्त्री होने के नाते हमारा समाज जिस तरह हमें अपनी यौनिकता दबाना और पुरुषों को अपनी यौनिकता साबित करना सिखाता है वहीं कालांतर में किसी हद तक यौन अपराधों का कारण बनता है।

बलात्कार जैसी आपराधिक समस्याओं से पार पाने के लिए हमें पहले अपनी यौनिक सोच को बदलना होगा और स्त्रियों को उनकी यौनिक आज़ादी और पहचान लौटानी होगी। हमारे यहां क़ानून बहुत अच्छे हैं किंतु उनकी स्थिति बेमानी है क्योंकि हमारा समाज महिलाओं को क़ानून का सही इस्तेमाल करने की समझ, ताक़त और आज़ादी नहीं देता। ज़रूरत इस बात की है कि महिलाओं की इज़्ज़त को महज उनकी व्यक्तिगत पहचान और सम्मान का मुद्दा रहने दिया जाए न कि संपूर्ण परिवार, कुल, जाति और राष्ट्र के सम्मान का प्रतीक। अपने इस हक़ को पाने के लिए महिलाओं को खुद ही संघर्ष करना होगा। अपने यौनिक अधिकारों की पहचान, सम्मान और रक्षा का दायित्व उन्हें स्वयं उठाना होगा। जब तक हम स्त्रियां खुद अपनी इस सोच से बाहर नहीं आएंगी कहीं न कहीं हम खुद पुरुषों को अपने यौनिक अधिकारों और सम्मान की दुनिया का खुदा बनाए रखेंगी और जाने अनजाने उनकी सत्ता का खामियाज़ा भुगतती रहेंगी। साथ ही आत्मरक्षा और सजग आत्मनिर्भरता अपनाकर हम स्वतः आत्मनिर्भर और आज़ाद जीवन की ओर बढ़ सकती हैं।

सुनीता ठाकुर, *जागोरी की कार्यकर्ता हैं।*